कलाएँ हमें जीवन में नया नज़रिया देती हैं

शिक्षिका रश्मि गौड़ के साथ नरेश पंवार की बातचीत

नरेश : पढ़ाने-लिखाने का मामला हो, प्रधानाध्यापिका के तौर पर विभिन्न कामों को व्यवस्थित करने का, या नई विभागीय ज़िम्मेदारियों का मामला, आप निरन्तर सीख ही रही हैं। सीखने की यह प्रेरणा आपको कहाँ से मिलती है?

रश्मि : जब भी मैं किसी नई चीज़ को देखती हूँ, उसे सीखने के लिए मेरे भीतर बहुत जिज्ञासा पैदा हो जाती है कि ये चीज़ मुझे सीखनी ही चाहिए, ये काम मुझे आना ही चाहिए। स्कूल से बाहर अपनी निजी ज़िन्दगी में भी मैं ऐसे ही करती हूँ। जैसे– हारमोनियम और ढोलक बजाना, नए व्यंजन बनाना, आदि। मुझे शौक़ है कि नई-नई चीज़ें सीखूँ। स्कूल में मैं हेड टीचर की तरह काम करती हूँ। वहाँ हमेशा नए-नए तरह के काम आते रहते हैं, मसलन, ऑनलाइन रजिस्ट्रेशन करना, बहुत सारे ऑनलाइन फ़ॉर्म्स भरना, आदि। ये सब काम हमें करने होते हैं। इस सबके लिए साइबर कैफ़े में जाने से वक्त ख़राब होता है। इसकी बजाय अगर हम इन कामों को ख़ुद सीख लें तो काम सुविधाजनक तरीक़े से हो जाता है। दूसरे, हमारे पास एक कौशल भी आ जाता है जो हम अपनी ज़िन्दगी में इस्तेमाल कर सकते हैं। हमारा काम आसान हो जाता है, और हम दूसरे पर निर्भर नहीं रहते हैं।

एक शिक्षक के रूप में हमको सीखते रहने की ज़रूरत है। हमारी पढ़ाई के ज़माने में पढ़ाई-लिखाई के तौर-तरीक़े, पाठ्यक्रम, सब अलग थे। आज हम अगर उसी तरह से काम करेंगे तो वह नहीं खपेगा। हमें पुराने ज़माने के लिहाज़ से नहीं, नए ज़माने और बच्चों के नए सन्दर्भों के लिहाज़ से काम करना होगा। बच्चों को नए ज़माने के कौशल सीखने हैं। मोबाइल

चलाना उनको बचपन से आता है, उसके आगे उनको कम्प्यूटर भी सीखना है। हम बच्चों को किलोबाइट, मेगाबाइट के ज़माने में सिर्फ़ अद्धा-पव्वा सिखाएँगे तो वे उनका वर्तमान परिप्रेक्ष्य में क्या इस्तेमाल करेंगे?

आने वाले समय में कुछ और गैजेट्स आ जाएँगे, कुछ नई विधियाँ आ जाएँगी, पाठ्यक्रम में बदलाव आ जाएँगे। इसलिए सीखना हमारी ज़रूरत भी है। जब हम नई-नई चीज़ें सीखते हैं, हमारे अन्दर एक जोश, एक ऊर्जा बनी रहती है। इससे हम भी बच्चों की तरह महसूस कर पाते हैं। जिस तरह बच्चे को नई चीज़ सीखने में ख़ुशी होती है, वैसे ही हमें भी होती है।

नरेश : आपने कहा कि बच्चों की ज़रूरत के नाते शिक्षक को सीखना पड़ता है। आपने इस सिलसिले में डांस क्लास और प्रार्थना सभा के लिए संगीत सीखने का भी ज़िक्र किया। आप इसकी प्रक्रिया हमें बताइए और यह भी कि और नया सीखने में क्या चुनौतियाँ आईं?

रश्मि : प्रार्थना अगर वाद्य यंत्रों के साथ हो तो उसका आनन्द ही कुछ और होता है। इसलिए मैं चाहती थी कि मेरे भी स्कूल में ऐसा हो। डाइट द्वारा संगीत पर एक कार्यशाला आयोजित की गई थी, मुझे उसमें भागीदारी का मौक़ा मिला। यह सुबह की सभा मुख्य रूप से प्रार्थना सभा पर केन्द्रित थी। हमने वहाँ वाद्य यंत्रों के साथ गाना सीखा और सात सुरों का अभ्यास किया। बाद में जितना वहाँ सीखा था, उसका रियाज़ करना शुरू किया। सवाल था कि आगे कैसे सीखें? सो, मैंने पहले तो किसी से थोड़ा-बहुत सीखा, फिर यूट्यूब, संगीत प्रवाह और संगीत सिखाने के एक ऐप के ज़रिए सीखा। अब मैं उसी पर रियाज़ करती हूँ, और एक-दो बार प्रैक्टिस करके गाना बजा लेती हूँ।

नरेश : यह सब आप बच्चों तक कैसे ले गईं?

रश्मि : मैंने स्कूल के लिए हारमोनियम ख़रीदा और बच्चों को सिखाया। बच्चे सीखना चाहते थे। बच्चों ने सुर सीखकर बजाना शुरू किया। ढोलक बजाने वाले एक भूतपूर्व विद्यार्थी, नीरज कान्त ने बच्चों को ढोलक सिखाई। एक बच्चे के अभिभावक, जो ढोलक बजाना जानते थे, ने भी मदद की।

नरेश : यह तो अच्छी बात हुई कि अभिभावक की प्रतिभागिता हो गई। उनकी क्या प्रतिक्रिया रही?

रश्मि : अभिभावक इससे ख़ुश होते हैं कि वे अपने बच्चों के स्कूल में कुछ योगदान दे पा रहे हैं। एक अभिभावक हारमोनियम बजाना जानते थे और एक ढोलक। मैंने उनसे कहा कि आप लोग बजाइए भी और बच्चों को सिखाइए भी। अभिभावक भी ख़ुश हुए। उन्होंने कहा कि हम लोग प्रोफ़ेशनली तो नहीं बजाते, लेकिन बच्चों को सिखा देंगे। वे इस बात से ख़ुश थे कि बच्चों में रुचि पैदा हुई है, और वे आगे अच्छे कलाकार हो सकते हैं।

नरेश : सर्वांगीण विकास के लिहाज़ आप से क्या सोचती हैं?

रश्मि : हमें बच्चों का सिर्फ़ पाठ्यक्रम ही पूरा नहीं करना है बल्कि उनके अन्दर मूल्यों और कौशलों का विकास भी करना है। इसके

लिए इस वर्ष हमने बच्चों के लिए ग्रीष्मकालीन क्रिएटिव होमवर्क और कुछ एक्टिविटीज़ रखी थीं। यह भी सोचा था कि अगर कोई बच्चा कोई स्किल सीखना चाहे, तो सीख सके। मसलन, वाद्य यंत्र बजाना, डांस करना, क्राफ़्ट बनाना, आदि। बच्चों ने सीखा भी। कुछ बच्चों ने डांस किया और उनके वीडियोज़ भी हमारे साथ यहाँ साझा किए। किसी ने ढोलक बजाई तो किसी ने क्राफ़्ट बनाया। कलाएँ तो सभी तरह की सीखनी चाहिए न! वे हमें जीवन में एक नया दृष्टिकोण देती हैं।

नरेश : कोविड के दौर में ऑनलाइन शिक्षण और प्रशिक्षण के लिए भी आप लोगों ने बहुत अच्छे तरीक़े से काम किया। उस दौर में तकनीकी तौर पर भी कई समस्याएँ थीं। आपने उन मुश्किलों का सामना कैसे किया?

रश्मि : शुरू-शुरू में हमने व्हाट्सएप का इस्तेमाल किया, पर वह बहुत काम नहीं आया। फिर फ़ाउण्डेशन ने ही टी-कॉन पर मीटिंग की, फिर ज़ूम आया। यह सब हमारे लिए नया था। इसके बाद टीम्स ऐप का इस्तेमाल किया गया। उसका लिंक बनाने में दिक़्क़तें आ रही थीं, तो हमने यूट्यूब से लिंक बनाना सीखा और बच्चों को सिखाया। बच्चों की सुविधा के लिए हमने स्क्रीन रिकॉर्डर से वीडियो भी बनाए। फ़ोन की मेमोरी कम होने के नाते ये वीडियो ठीक से चल नहीं पा रहे थे और इनके फ़ौंट भी साफ़ नहीं थे। फिर यूट्यूब चैनल का ख़याल आया। चैनल के लिए हमने पावरप्वॉइंट के ज़रिए वीडियो बनाए। उसमें फ़ौंट साफ़-साफ़ दिख रहे थे, पर वीडियो को और अच्छा करने के लिए अपने कम्प्यूटर में विंडोज़ 16 डलवाया। यह भी सीखा कि वीडियो में एनिमेशन कैसे डालते हैं। इस तरह कुछ अच्छे वीडियो बन गए। मैंने इस तरह कई चीज़ें सीखीं और अब भी सीख ही रही हूँ। मैंने बच्चों के लिए गूगल फ़ॉर्म भी बनाया।

नरेश : बहुत सारे विभागीय काग़ज़ी काम ऐसे होते हैं, जिन्हें कम्प्यूटर से करना आसान होता है। इस सिलसिले में आपका क्या अनुभव है?

रश्मि : मैंने ठीक से कम्प्यूटर नहीं सीखा था। मेरी बहन के पास कम्प्यूटर था, उसी ने शुरुआत में मुझे कुछ-कुछ सिखाया। कम्प्यूटर बन्द करना, खोलना, फ़ाइल बनाना, फ़ोल्डर बनाना, सेव करना, आदि उसी ने सिखाया। अपने बच्चे के लिए मैं उसी पर गाने, कार्टून

और वीडियो चलाती थी। एक दिन मैंने सोचा कि चलो, यही स्कूल के बच्चों के लिए भी करते हैं। उनको मज़ा आएगा। इस तरह मैंने एक मिनी लैपटॉप ख़रीदा, अतिरिक्त की-बोर्ड व माउस मँगवाया और बच्चों को लैपटॉप खोलना-बन्द करना, पेज प्रिंट करना, वर्ड फ़ाइल पर अपना और स्कूल का नाम टाइप करना, आदि सिखाया। काग़ज़ पर तो वे रोज़ ही लिखते थे, कम्प्यूटर पर लिखने में उनको मज़ा आया। उनकी दिलचस्पी बढ़ने लगी तो मैंने उन्हें कुछ वीडियो और पठन सामग्री भी दिखाई। इस प्रक्रिया में उन्होंने छोटी-छोटी प्रोजेक्ट फ़ाइलें बनाना सीख लिया।

आज स्कूल सम्बन्धी सारी जानकारी मेरे कम्प्यूटर में सेव है। जब भी कोई जानकारी माँगता है, मैं सीधे उसी से भेज देती हूँ। मेरी कैशबुक भी अब उसी पर बनी हुई है। इससे समय और काग़ज़ की भी बचत होती है।

नरेश : क्या बच्चों की भी कम्प्यूटर सीखने में रुचि बनी?

रश्मि : हाँ, कम्प्यूटर सीखने में बच्चे बहुत दिलचस्पी लेते हैं और अभिभावक भी बहुत ख़ुश होते हैं। उनको लगता है कि उनके बच्चे नई तकनीकी सीख पा रहे हैं।

नरेश : पढ़ने की आदत को लेकर आप क्या सोचती हैं? अपनी रुचि के बारे में बताए?

रश्मि : किताबें पढ़ते तो हम पहले भी थे पर शिक्षा पर कम किताबें पढ़ी थीं। पहले तो बहुत सारे उपन्यास पढ़े, प्रेमचंद को पढ़ा, *चित्रलेखा* पढ़ी। मेरे पापाजी को भी पढ़ने का शौक़ था। इसलिए हमारे घर में बहुत सारी अलग-अलग धर्मों की किताबें भी थीं, मैंने उन्हें भी पढ़ा। पढ़ने में इंटरेस्ट तो था ही। इंग्लिश के कुछ नॉवेल, ड्रामा वग़ैरह भी पढ़े। पेरेंटिंग पर भी एक किताब पढ़ी। मतलब, शौक़िया पढ़ते थे। हमारे व्यक्तित्व विकास से उनका सम्बन्ध हो सकता है लेकिन वे हमारे पेशे से सम्बन्धित नहीं थीं।

मेरे घर पर एक किताब थी जॉन हाल्ट की, *बच्चे असफल क्यों होते हैं।* मैंने उसे पढ़ा। उसमें एक तरह का नया दृष्टिकोण मिला। बच्चों के बारे में हम इस तरीक़े से, संवेदनशील तरीक़े से, नहीं सोचते थे। हम जिस तरीक़े से पढ़कर आए थे, उसमें हमारा फ़ोकस कंटेन्ट डिलीवर करने पर होता था। बच्चा क्या सोच रहा है, इसपर हम कम ही ध्यान देते थे। यह किताब पढ़कर मुझे लगा कि हमें बच्चों के बारे में इससे ज़्यादा सोचना चाहिए।

चूँकि मैं वर्कशॉप वग़ैरह में फ़ाउण्डेशन जाती रहती थी, वहाँ के पुस्तकालय में कठैतजी ने मुझे जॉन हाल्ट की बहुत-सी किताबें दिखाईं। वहीं से *असफल स्कूल* किताब ले आई। पढ़कर सोचा कि हाँ, हमें शिक्षक के रूप में और सोचने की ज़रूरत है। उसके बाद *मैंने दिवास्वप्न, मेरी ग्रामीण शाला की डायरी* पढ़ी, *तोत्तोचान* और *समर हिल* पढ़ी। किताब पढ़कर मैंने जाना कि बच्चों की साइकोलॉजी कैसी होती है, मेमोरी कैसी होती है। हम एक भावनात्मक पक्ष देख रहे होते हैं तो उसके साथ-साथ हमें वह पक्ष भी तो देखना है कि हमारा शरीर, दिमाग़ किस तरह से काम करता है। हम बच्चे की प्रतिक्रिया,

उसके व्यवहार, आदि को ज़्यादा बेहतर तरीक़े से समझ पाएँगे। हम समझ पाएँगे कि बच्चा कोई काम क्यों कर रहा है।

स्कूल में हमने पढ़ने-लिखने की शृंखला शुरू की, 'किताबों के पन्ने जो हमने पलटे' नाम से। उसमें कुछ लोग किताबें पढ़ते थे और शेयर करते थे, बाक़ी लोग सुनते थे। इस शृंखला में सन्दर्भ मैं ही रखती थी। उसका मुझे इतना फ़ायदा हुआ कि वहाँ जो भी पेपर पढ़ा जाता था, उसको मैं भी पढ़ती ही थी। हर पेपर या तो सीधे हमारे क्लासरूम से जुड़ा होता था या फिर शिक्षा या समाज से। इस प्रक्रिया में मैंने बहुत कुछ सीखा और किताबों के प्रति मेरा रुझान और बढ़ा।

नरेश : पढ़ने के साथ-साथ आप लिखती भी हैं?

रश्मि : लिखने का काम तो मैंने कम ही किया। हालाँकि, कुछ अनुभव लिखे हैं मैंने। कोविड के दौरान फ़ाउण्डेशन के साथ शुरुआती भाषा और गणित पर जो काम किया था, उसका दस्तावेज़ लिखा। उसे डाइट ने प्रकाशित किया। मेरी एक एक्शन रिसर्च डाइट से प्रकाशित होने वाली है। इसी तरीक़े से मैंने काम से जुड़ा हुआ ही लिखा है।

नरेश : आपके पुस्तकालय से बच्चे तो पढ़ते ही हैं, अभिभावक भी पढ़ते हैं। ये नई बात है।

रश्मि : हाँ, अभिभावक और बच्चे सभी किताबें पढ़ने के लिए आते हैं। अभी डीएलएड वाले स्टूडेंट भी ले गए किताबें। उन्होंने जब हमारा पुस्तकालय देखा तो पूछा कि आप लोग इसे कैसे व्यवस्थित करते हैं, क्या हम भी ले सकते हैं किताबें? हमने कहा कि हाँ, बिलकुल ले जाइए।

नरेश : अभी कोविड के बाद जिस तरह का माहौल है, ज़्यादातर लोग यही कह रहे हैं कि इस बार बच्चों को वर्तमान ग्रेड पर लाना है। इसके लिए आप लोग स्कूल में क्या नया कर रहे हैं?

रश्मि : कोविड के बाद जब स्कूल खुले तो हमने इसकी प्रक्रिया शुरू की। जिन बच्चों का कुछ छूट गया था या गैप बन गया था, उसपर हमने काम करना शुरू किया। हमने शुरू में ही नए ढंग से ग्रुप बना दिए थे। दूसरे, एक रीडिंग ऑवर भी बच्चों के लिए रखा, ताकि पढ़ने-लिखने का माहौल बने। तीसरे, हम बाल-गीत जैसी कुछ नई गतिविधियाँ भी कर रहे हैं। मैं ख़ुद भी कर रही हूँ और बच्चे भी कर रहे हैं। इनमें बच्चों की बहुत दिलचस्पी है। नए गीत उनके भाषाई कौशल और विकास के लिए ज़रूरी भी हैं। शिक्षक पढ़ाई-लिखाई को गतिविधि-आधारित बना रहे हैं ताकि बच्चों को रुचिकर लगे। जब हम सुबह-सुबह गतिविधियाँ करते हैं तो बच्चे फ़्रैंक हो जाते हैं, उनकी झिझक दूर हो जाती है और वे दिनभर जोश में रहते हैं। बच्चों को लेजिम सिखाना भी शुरू किया है। एक लड़की, जो हमारी ही विद्यार्थी रही है, बच्चों को डांस के कुछ स्टेप्स सिखाती है। बच्चे जब कुछ गतिविधि करते हैं तो उनमें जोश आता है, और यह उनकी पढ़ाई में भी दिखता है। इनके पिछले साल बहुत बोरिंग गुज़रे हैं, इसलिए अगर हम उनकी रुचि का काम उन्हें न दें तो मामला बोझिल

ही रह जाएगा। गतिविधियाँ कराने के बाद उपस्थिति भी बढ़ जाती है।

नरेश : इस साल नई गतिविधियाँ और पढ़ाई-लिखाई साथ-साथ चलेंगी। अभिव्यक्ति जैसे कौशल के लिए आप क्या प्रयास करती हैं?

रश्मि : स्कूल में बच्चों के अन्दर झिझक बहुत थी तो मैंने 'अपना मंच' नाम से एक गतिविधि शुरू की। विद्यार्थियों के लिए एक अभिभावक से कहकर एक डायस बनवाया था। उसपर लिख दिया– 'मेरा अपना मंच'। हम उसपर एक माइक रख देते थे। शुरू में बच्चों को ये नहीं बोला कि इसमें क्या बोलना है। मैंने कहा कि बच्चो! मैं आज आपसे कुछ बोलना चाहती हूँ। आप भी अगर कुछ भी बोलना चाहते हों तो बोल सकते हैं। शुरू-शुरू में कुछ आत्मविश्वासी बच्चे आते थे और बोलकर चले जाते थे। फिर मैं कुछ देर के लिए कक्षा से बाहर चली जाती, तब वे बच्चे भी उठते जो कभी नहीं बोलते थे। इनको उठाना ही हमारा टारगेट था। एक दिन मैंने उस बच्चे की आवाज़ सुनी जो कक्षा में कभी नहीं बोलता था।

कहने का तात्पर्य यह है कि पहले बच्चे चुपके-चुपके ही बोले। फिर हमने उनसे कहा कि उन्हें छूट है, वे कुछ भी बोल सकते हैं। किसी फ़िल्म का डायलॉग, कविता, या जो भी बात उनके मन में आ रही हो, वह बोल सकते हैं। धीरे-धीरे इस गतिविधि को हम प्रार्थना में ले आए। प्रार्थना में जब बच्चे अपनी प्रस्तुति देते या अपनी दिनचर्या के काम के बारे में डायस पर आकर बोलते हैं, उनका एक अलग ही आत्मविश्वास होता है। शिक्षकों को डायस से बोलते देखकर बच्चों के मन में भी आता है कि वे भी डायस से बोलें।

नरेश : ये जो सारी गतिविधियाँ आप स्कूल में कराती हैं, उनसे बच्चे के अन्दर कुछ मूल्य जा रहे होते हैं, चाहे सैद्धान्तिक हों या शैक्षिक।

रश्मि : प्रार्थना में ऐसा नहीं है कि कोई एक ही बच्चा बोलेगा या कुछ बच्चे ही बोलेंगे। ऐसा

नहीं होगा कि सिर्फ़ एक-दो होशियार बच्चों को ही बुलाएँ। हमारे यहाँ पहले जो अपने-आप आना चाह रहा है वो आएगा, फिर हम बुलाते हैं कि आज कौन आएगा। बच्चे भी उत्साहित करते हैं कि आज ये आएगा। धीरे-धीरे लगभग सारे बच्चों को मौक़ा मिल जाता है। दूसरी चीज़ यह कि अगर बच्चे को समाचार बोलना है, और वह नहीं बोल पाया तो हम कहते हैं कि जो आ रहा है वही बोलो। इससे उसकी अभिव्यक्ति होती है, और दूसरे बच्चे जब ताली बजाते हैं तो उसका आत्मविश्वास भी बढ़ता है। बच्चा इस प्रक्रिया में सीखता भी है। अगर कोई बच्चा 'वर्ड ऑफ़ द डे' में कोई शब्द बोलना चाहता है, और नहीं बोल पा रहा है, तो हम उसको एक किताब देते हैं या स्पेलिंग बता देते हैं। अगर कोई बच्चा नहीं बोल पा रहा है तो बाक़ी बच्चे उसके साथ में स्पेलिंग बोलकर उसका सपोर्ट करते हैं। जब हम खेल की टीम बनाते हैं या कोई और गतिविधि कराते हैं, तब उन्हीं से पूछते हैं कि बताओ, कौन टीम लीडर बनेगा? टीम लीडर भी हर बार अलग-अलग होता है। टीम लीडर की मर्ज़ी से उसकी टीम बनती है। उसे बताया जाता है कि टीम से, समूह भावना से ही आप जीत सकते हैं।

नरेश : बच्चों में मूल्य निर्माण के लिए पुस्तकालय कैसे मदद करते हैं?

रश्मि : हर कहानी में कुछ-न-कुछ मूल्य छुपे रहते हैं। अगर हम उस कहानी को बच्चों को अच्छे-से डिलीवर कर सकें, तो मूल्यों की डिलीवरी अपने-आप हो जाती है। मसलन, गाँधीजी की जीवनी या सत्यवादी हरिश्चंद्र पढ़ें तो बिना बताए यह मूल्य पता चल जाता है कि सत्य बोलना चाहिए। बच्चे पात्रों के चरित्र से प्रभावित होते हैं। वे घटनाओं से ख़ुद को जोड़ते हैं, और उनसे सीखते भी हैं।

नरेश : आपसे बातचीत करते हुए लगा कि शायद जातिगत भेदभाव तो आपके यहाँ नहीं होता है?

रश्मि : जाति का भेदभाव हमारे यहाँ नहीं है। हमारे यहाँ बहुत-से बच्चे एससी कैटेगरी से आते हैं, सवर्ण भी हैं, नेपाली भी, ओबीसी और मुसलमान भी। हमारे यहाँ आप पता ही नहीं लगा पाओगे कि कौन किस जाति का है। लेकिन कभी-कभी विभागीय सूचनाओं के लिए बताना-पूछना पड़ता है। जैसे– परसों की ही बात है, अभी कुछ बच्चों के जाति प्रमाण-पत्र नहीं मिले थे। मैंने उनके अभिभावकों को बोल दिया था पर बच्चे नहीं लाए थे। मैंने बच्चों को बोला कि बच्चो, आपकी मम्मी से बात हुई थी, सर्टिफ़िकेट के लिए। सर्टिफ़िकेट जमा करो, ऑनलाइन रजिस्ट्रेशन करना है। एक सवर्ण लड़की ने पूछा कि मैम, क्या मुझे भी लाना है? मैंने कहा, नहीं। तो वह पूछने लगी कि क्यों, मेरे सर्टिफ़िकेट की ज़रूरत क्यों नहीं? ऐसे में ऑकवर्ड स्थिति भी आ जाती है। मैंने इस बच्ची को समझाया कि जिन लोगों से सर्टिफ़िकेट माँगा है, उनका एक फ़ॉर्म भरेगा। मैंने बताया कि वे एससी कैटेगरी से हैं। उसने पूछा कि एससी क्या होता है? मैंने सरनेम के सहारे समझाने की कोशिश तो की, पर उसके चेहरे पर प्रश्नचिह्न बना रहा। अब उसे मैं कैसे बोलती कि वह बच्चा अलग वर्ग का है, जबकि सारे बच्चे साथ-साथ खेलते, रहते हैं।

नरेश : आपकी नज़र में शिक्षक कैसा होना चाहिए?

रश्मि : हम अच्छे शिक्षक तब ही हो पाते हैं जब ख़ुद भी सीखते रहें। विकास कभी भी पीछे की ओर नहीं चलता। हमेशा नई तकनीकी और नई-नई चीज़ें आती ही रहेंगी। इसलिए मेरे हिसाब से, शिक्षक को हमेशा सीखते ही रहना चाहिए। हमें देखकर बच्चे भी नई चीज़ों को सीखना शुरू करते हैं। वे हमसे प्रभावित भी होते हैं, और हमें ख़ुद के व्यक्तित्व में ढालने की कोशिश करते हैं।

जो हमें पढ़ाना है, उसका ज्ञान तो होना ही चाहिए। मसलन, मुझे तो सारे ही विषय पढ़ाने हैं और कहीं पर मुझे कमी लग रही है तो उसके लिए बहुत सारे साधन हैं, किताबें हैं, नेट पर सामग्री है, और साथियों से भी पूछा जा सकता है। हमें कम-से-कम बच्चों के प्रश्नों को तो पूरा करना ही चाहिए।

दूसरी चीज़ जो एक शिक्षक के लिए ज़रूरी है, वह है 'चाइल्ड साइकोलॉजी'। बच्चे क्या सोच रहे हैं, कैसे सोचते हैं, उनकी की गई ग़लतियों के कारण को समझना, सीखने में बाधा पहुँचा रही चीज़ों, आदि को हमें जानना चाहिए। हमें प्रयास करना चाहिए कि बच्चा स्वाभाविक रूप से सीख पाए।

एक शिक्षक को संवेदनशील होने के साथ-साथ समाज के प्रति भी जागरूक होना चाहिए। अगर वैल्यूज़ हम ख़ुद नहीं मानेंगे तो वो बच्चों में भी नहीं आएँगी। मैंने कई बार बच्चों से सुना है कि अरे यार! हमारे लिए ही ग़लत है, बड़ों के लिए ये सही है। ये दोनों तरह की वैल्यूज़ हैं। एक हम दिखा रहे हैं और एक सिखा रहे हैं। ये ग़लत है। जो हम सिखा रहे हैं, वह हमें भी करके दिखाना होगा। बच्चे हमारे भाव समझते हैं। हमें कोशिश यही करनी चाहिए कि बच्चों को हम जो बनाना चाहते हैं, वह अपने अन्दर भी जिएँ।

नरेश : स्कूल में बच्चों के काम करने को पेरेंट्स किस तरह देखते हैं? बच्चों की देखभाल और शिक्षकों के साथ उनके सम्बन्धों के किस तरह के अनुभव हैं आपके?

रश्मि : कई बार स्कूल में कुछ अभिभावक कहते हैं कि बच्चों से सफ़ाई नहीं करानी है। हम कहते हैं कि बच्चे सफ़ाई कहाँ कर रहे हैं, वो तो हमारे साथ सहयोग कर रहे हैं। फिर पूछते हैं कि अच्छा, आप ये बताओ कि बच्चे घर में काम करते हैं या नहीं? उनके पास कोई जवाब नहीं होता, क्योंकि घर में तो वे काम करते ही हैं। मैंने कहा कि जिस हक़ से आप घर में कहते हैं उसी हक़ से हम स्कूल में भी कहते हैं। हम यह भी देखते हैं कि किस बच्चे को कैसी भूमिका दी जाए। ऐसा नहीं है कि हम पहली कक्षा के बच्चों को टॉयलेट साफ़ करने के लिए बोलेंगे। कक्षा 1 और 2 के बच्चे हमारे पास आते हैं कि मैमजी, मुझे टॉयलेट जाना है, हमारी बेल्ट खोल दो, हमारे पैंट का हुक खोल दो। फिर वे अपने कपड़े लेकर हमारे पास आते हैं, और हम चेंज करते हैं।

एक बार हमारे यहाँ टीकाकरण हुआ तो इंजेक्शन लगे थे। हमारे बच्चे डर गए तो हमने गोद में पकड़-पकड़ कर उनको इंजेक्शन लगवाए। सरकारी स्कूल में बच्चों के साथ शिक्षकों के ख़ूब अच्छे रिलेशंस हैं। हमारे यहाँ अधिकांश महिलाएँ हैं, और मुझे लगता है महिलाएँ वैसे भी थोड़ी केयरिंग होती हैं, तो अच्छा माहौल रहता है। बच्चे भी सब खुलकर बात कर पाते हैं। वे हमपर विश्वास करते हैं।

रश्मि गौड़ 26 वर्षों से प्राथमिक कक्षाओं में शिक्षण कार्य कर रही हैं। आपने प्राथमिक कक्षाओं में सभी विषयों में शिक्षण कार्य किया है। वर्तमान में राजकीय आदर्श प्राथमिक विद्यालय श्रीकोट गंगानाली, पौड़ी गढ़वाल में प्रधानाध्यापिका के पद पर कार्यरत हैं। यहाँ गणित विषय के साथ अँग्रेज़ी व हिन्दी विषय भी पढ़ाती हैं। उनकी कोशिश रहती है कि बच्चों में अवधारणात्मक समझ विकसित हो और सीखना उनके लिए एक रुचिकर व सहज प्रक्रिया हो। रश्मि को किताबें पढ़ना अच्छा लगता है। वे अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन द्वारा आयोजित कार्यशालाओं व विचार विमर्श में भी भाग लेती रहती हैं।
सम्पर्क : gaurrashmik.rg@gmail.com

नरेश पंवार अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में पिछले 7 सालों से गणित विषय में कार्य कर रहे हैं। वर्तमान में वे श्रीनगर, पौड़ी गढ़वाल में कार्यरत हैं। इससे पहले वे पर्यावरण विद्यालय अंजनीसैंण, श्री भुवनेश्वरी महिला आश्रम, टिहरी गढ़वाल में शिक्षण कार्य कर रहे थे। वहाँ उन्होंने 8 साल प्रारम्भिक स्तर के बच्चों के साथ कार्य किया है। उनकी रुचि सीखने-सिखाने की नवाचारी शिक्षण विधियों में है।
सम्पर्क : naresh.panwar@azimpremjifoundation.org